International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal l -Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-I SSN: 2348-6848
p-I SSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 05
March 2018

भारतीय लोकतंत्र के दृष्टिकोण एवम विभिन्न आयामः एक विश्लेषण

विजय कुमार मिश्र
सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान,
मंगला देवी स्मारक डिग्री कालेज, मसिका नैनी, इलाहाबाद।

अपनी सभ्यता और संस्कृति के विकास क्रम में मानव ने अपने समक्ष जिन प्रणालियों तथा मूल्यों की स्थापना की है, उनमें लोकतंत्र का स्थान निश्चय ही अतिविशिष्ट है। अपनी सम्पूर्ण विकास यात्रा के दौरान मानव के लिए उसने, स्वयं की पहचान, गरिमा और आत्मसम्मान की खोज एक अलग प्रश्न रहा है और लोकतंत्र इस प्रश्न का यथोचित उत्तर बनकर उपस्थित हुआ है– न केवल एक प्रणाली यह व्यवस्था के रूप में, बल्कि मूल्यों के रूप में भी यह मनुष्य के विवेक पर आधारित एक शासन प्रणाली भी है तथा मनुष्य के रूप में जीवन जीने की गरिमापूर्ण पद्धति भी। भारत में भी स्वतंत्रता के पश्चात लोकतंत्र को अपनाया गया लेकिन उसका राजनीतिक पक्ष मात्र ही। फिर संविधान की प्रस्तावना, नाकरिकों को प्रदत्त मूल अधिकारों व नीतिनिर्देशक तत्वों के माध्यम से लोकतंत्र के सामाजिक आर्थिक उद्देश्यों को प्राप्त करने का संकल्प लिया गया। इसे सम्पर्णता में देखें तो हमारे समक्ष कई मूलभूत प्रश्न उपस्थित होते हैं, जैसेः क्या भारत का लोकतंत्र राजनीतिक पहलू के साथ–साथ सामाजिक व आर्थिक संदर्भों को अपने साथ जोड़ पाया है? क्या भारतीयों ने जीवन पद्धति के रूप में इसे स्थापित करने में सफलता पाई है? क्या भारतीय लोकतंत्र विश्व, जो कि लगातार आतंकवाद से त्रस्त है, को एक नई दिशा दिखा सकता है? इन सभी प्रश्नों के आलोक में हम भारतीय लोकतंत्र का मूल्यांकन करेंगे तथा उसकी उपलब्धियों व चुनौतियों की एक स्पष्ट तस्वीर अपने सामने रखने की कोशिश करेंगे।

जहां तक भारत का सवाल है तो भारत में संस्कृति के रूप में लोकतंत्र हमेशा विद्यमान रहा है। भारतीय उपनिषदों में उल्लिखित 'मुण्डे–मुण्डे मतिभिन्ना'' एवं 'सर्वे भवन्तु सुखिनः'' स्पष्ट

करते हैं कि भारतीय संस्कृति में हमेशा से ही लोकतांत्रिक मूल्यों को अपनाया जाता रहा है। फिर इसका स्वयं में सबसा बड़ा प्रमाण है। भारत की मोजाइक संस्कृति जो तरह–तरह के विविधताओं को धारण करती आई है। तथा अन्तर्विरोधों को पचाते हुए एक नये रूप में निखरती आई है। उल्लेखनीय है कि किसी भी सामाजिक संस्कृति या मोजाइक संस्कृति का विकास लोकतांत्रिक मूल्य पद्धति के अभाव में नहीं हो सकता है और इस संदर्भ में भारतीय संस्कृति अद्वितीय है।

भारतीय लोकतंत्र में हमेशा इस वास्तविकता को ध्याय में रखा गया। इसे वास्तविकता स्वरूप प्रदान करने के लिए स्वतंत्रता के तुरंत पश्चात् भूमि सुधार कार्यक्रम लागू किए गए तथा जमीदारी प्रथा का अंत कर दिया गया। हांलाकि यह अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में असफल ही रहा। फिर बंधुआ मजदूरी का अंत किया गया। सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों तथा विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के तहत गरीबी तथा बेरोजगारी जैसी विभिन्न विकराल समस्याओ पर लगातार जोर किया गया।

आज भारत की सबसे बड़ी चुनौतियां राजनीतिक स्तर पर उपस्थित है। स्थिरता व परिपक्वता के बावजूद हमारी राजनीतिक प्रणाली में गहरी विसंगतियां पैदा हो गई है। राजनीति आज धर्म, जाति, क्षेत्र, संप्रदाय जैसे संकीर्ण मुद्दों पर आधारित हो गई है तथा विकास सम्बन्धी वास्तविक मुद्दे गौण हो गए हैं। आज चुनावों की निष्पक्षता पर भी संकट मंडरा रहा है। चूंकि भारतीय आम चुनाव आज धनबल एवं बाहुबल पर आश्रित होते जा रहे हैं। धन चुनावों में अनैतिक भूमिका निभा रहा है। सत्ता की राजनीतिक ने अपराधीकरण की समस्या को भी बढ़ाया है फलतः राजनीतिक नेतृत्व का संकट पैदा हो गया है। आज दागी व्यक्ति संसद के साथ–साथ सरकार में भी शामिल हो रहे हैं। इससे राजनीतिक दलों में नैतिकता का संकट भी पैदा हुई है तथा कार्य संस्कृति में गिरावट आई है।

वाह्य रूप से आतंकवाद तथा आंतरिक रूप से नक्सलवाद एवं प्रथकवाद एवं गंभीर खतरा बनकर भारतीय राज्य के समक्ष उपस्थित हुई है। उल्लेखनी है कि नक्सलवाद केवल कानून व्यवस्था की समस्या मात्र नहीं है, वरन् इसकी जड़े हमारी सामाजिक आर्थिक व्यवस्था में छिपी

हैं। आतंकवाद लगातार भारतीय राज्य के समक्ष बहुविध समस्याएं उत्पन्न कर रहा है। सीमापार आतंकवाद ही अब केवल आज की समस्या नहीं रही बल्कि यह वैश्विक आतंकवाद के निशाने पर भी है। अतः भारतीय राष्ट्रराज्य को इस संदर्भ में स्पष्ट नीति बनानी होगी तथा सख्ती के साथ निबटना होगा।

लोकतंत्र एक आध्यात्मिक आदर्श है। यह एक संगठन तथा जीवन–मार्ग है जहां व्यक्तित्व तथा मानवता का पूर्ण विकास सम्भव है। ''इसके समस्त समर्थकों ने मनुष्य और उसके अधिकार को केन्द्र मान कर ही अपने विचारों का प्रतिपादन किया है। इसके अनुसार, लोकतंत्र की अवधारणा व्यापक है जिसमें इसे शासनतंत्र के स्वरूप, राज्य के रूप में एक व्यवस्था, समाज के विशाल रूप, नैतिक प्रारूप, आर्थिक आधारशिला, जीवन की महती परिपाटी के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यह दृष्टिकोण लोकतंत्र को एक ऐसी शासन प्रणाली और सामाजिक व्यवस्था के सिद्धान्त के रूप में प्रस्तुत करता है जिसकी एक विशेष प्रकार की मनोवृत्ति होती है और जिसका एक आर्थिक आधार होता है। यह लोकतंत्र के राजनीतिक, सामाजिक और दैनिक व्यवहार के सारे सामाजिक एवं सांस्कृतिक मापदण्डों को सम्मिलित रूप में इसकी परिभाषा के अन्दर प्रस्तुत करता

स्पष्ट है कि उदारवादी या शास्त्रीय दृष्टिकोण लोकतंत्र को एक ऐसी शासन–व्यवस्था और सामाजिक अवधारणा के रूप में प्रस्तुत करता है, जिसकी मनोवृत्ति एक विशेष कलेवर की होती है और जिसकी पुष्ट, दृढ़ और निश्चित आधारभूमि होती है। इसकी परिधि में राजनीतिक, सामाजिक एवं दैनिक आचरण के समस्त सामाजिक एवं सांस्कृतिक मापदण्ड सम्मिलित हैं।

विशिष्टवर्गीय दृष्टिकोण– लोकतंत्र के परम्परावादी दृष्टिकोण के अन्तर्गत इसे बहुसंख्यक का शासन माना गया है, किन्तु विशिष्टवर्गीय या अभिजनवादी दृष्टिकोण इसे अल्संख्यक का शासन बतलाता है। इसके अनुसार किसी भी देश में शासन सत्ता अन्ततः कुछ विशिष्ट जनों या एक विशिष्ट वर्ग के हाथों में निहित रहती है। **हैराल्ड डी0 लासवेल** ने स्पष्ट वादिता के साथ कहा है– ''सरकार हमेशा अल्पसंख्यक की होती है।'' वस्तुतः इनके अनुसार जनता का

e-l SSN: 2348-6848
p-l SSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 05
March 2018

शासन तो मात्र एक धोखा है। समस्त जनता न तो कभी शासक रही है और न ही कभी शासन कर सकती है। मात्र कुछ निर्वाचित विशिष्टवर्गीय व्यक्ति ही शासन करने के योग्य समझे जाते हैं और केवल वही सत्ता तक पहुंच पाते हैं। इस विशिष्ट वर्ग को अभिजन, राजनीतिक वर्ग, शासक अभिजन, शक्ति अभिजन, सर्वोच्च नेतृत्व, आदि विभिन्न नामों से पुकारा जाता है। इस अवधारणा की आधारभूत मान्यताएं निम्नवत् हैं–

1) सरकार 'जनता के द्वारा' तो नहीं हो सकती, 'हां जनता के लिए' अवश्य हो सकती है।

2) लोकतंत्र में शासन मात्र विशिष्ट वर्ग यानी अभिजन वर्ग के हाथ में ही होता है।

3) राजनीतिक निर्णय–निर्माण केवल विशिष्ट वर्ग द्वारा ही सम्पादित किया जाना सम्भव है, सामान्य जनता द्वारा नहीं, वस्तुतः यह कार्य तो विशिष्ट वर्ग का है ही।

4) यदि लोकतंत्र में विशिष्ट वर्ग का अस्तितव न हो, तो वह भीड़तंत्र में परिवर्तित हो जायेगा।

5) जनता निर्वाचन के द्वारा जिन लोगों को अपना प्रतिनिधि या शासक चुनती है, वे विशिष्ट वर्ग के ही होते हैं।

6) यह दृष्टिकोण प्रजातंत्र को विशिष्ट या अभिजन वर्गों के बीच सत्ता के लिए संघर्ष के अतिरिक्त और कुछ नहीं मानता।

बहुलवादी दृश्टिकोण

रॉबर्ट ए0 डहल के शब्दों में, ''सरकारी नीतियों का निर्धारण कोई एक वर्ग नहीं, बहुत से वर्ग करते हैं, जैसे व्यापारी, उद्योगपति, श्रमिक संघ, राजनीतिक मतदाता तथा स्वयंसेवी संस्थाएं।'' लिपसेट ने निम्न वर्गों का राजनीति में योगादन, मतदान पर सामाजिक परिस्थितियों का प्रभाव, राजनीतिक पर बुद्धिजीवियों का प्रभाव, मजदूर संघों से सम्बद्ध राजनीतिक गतिविधियां, जैसे अनेक महत्वपूर्ण पक्षो बहुलवादी लोकतंत्र से सम्बद्ध बतलाया है। इन विद्यद्वानों ने, लोकतंत्र को एक ऐसी व्यवस्था के रूप में चित्रित किया है जिसमें अनेक दल, दबाव गुट त्था हित समूह राजनीतिक क्रियाओं को प्रभावित करने के लिए प्रयासरत रहते हैं इसके अन्तर्गत प्रत्येक दल परस्पर एक–दूसरे की शक्त्यिों पर अंकुश का कार्य करते हैं। जहां तक राजीनतिक

अथवा आर्थिक समस्याओं का सवाल है, कों एक वर्ग या व्यक्ति या समूह अकेले निर्णय नहीं लेता है। इस सिद्धान्त के प्रमुख तत्व इस प्रकार हैं–

1) लोकतंत्र का आधार व्यक्तियों का संगठन है व्यक्ति नहीं।

2) इसमें राज्य का संगठन तथा राजनीतिक शक्ति का स्वरूप ऐसा होता है कि लोकतंत्र बहुलवादी रूप ग्रहण कर लेता है। इस लोकतंत्र के अनुसार शासन में प्रत्येक व्यक्ति भागीदार होता है।

3) इसके अन्तर्गत शक्ति केवल राज्य में निहित नहीं होनी चाहिए, बल्कि उसका निवास एवं विभाजन अनेक संस्थाओं में भी होना आवश्यक है।

4) बहुलवादी लोकतंत्र के अन्तर्गत शासन शक्ति सामान्यतः तीन भागों यानी विधायी, कार्यकारी, न्यायिक में विभक्त कर दी जाती है, इस विभाजन को शक्ति पृथक्करण का सिद्धान्त कहा जाता है।

5) सरकार एवं शक्तियों का विभाजन प्रादेशिक आधार पर भी होना अति आवश्यक है मात्र कार्यों के आधार पर नहीं। शक्तियों को विभिन्न क्षेत्रीय सरकारों में विभक्त कर दिया जाता है। यह संघीय व्यवस्था के अन्तर्गत केन्द्र एवं राज्यों के मध्य शक्ति के वितरण के रूप में देखा जा सकता है। जहां तक एकात्मक सरकार का प्रश्न है, उसमें यह विभाजन शक्ति के स्रोत केन्द्रीय सरकार के आलावा केन्द्र सरकार को सीमित करने और शासन में अधिक कुशलता लाने के उद्देश्य से शक्तियां स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं को भी प्रदत्त कर दी जाती हैं।

6) न्यायालयों की निष्पक्षता और ईमानदारी को बनाये रखने के उद्देश्य से लोकतंत्रीय देशों की न्यायपालिका की स्वतंत्रता को आश्वस्त रखना आवश्यक है।

मार्क्सवादी दृश्किोण

मार्क्स का मत है कि जिस राज्य में शासन व्यवस्था का संचालन मात्र साधन–सम्पन्न वर्ग के हित के रूप में किया जाता है, वह लोकतांत्रिक तो हो ही नहीं सकता। मार्क्सवादी दृष्टिकोण बतलाता है कि जब तक पूंजीवाद तथा निजी सम्पत्ति का अस्तित्व रहेगा, तब तक लोकतंत्र भी पूंजीवादी ही रहेगा और समर्थन भी उन्हीं का करेगा। सच्चे लोकतंत्र की स्थापना इसके

अनुसार तभी सम्भव है जब पूंजीवादी राज्य का अन्त कर के सर्वहारा (श्रमिक) वर्ग की अधिनायकशाही की स्थापना की जाये। वास्तविकता तो यह है कि लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था उस शासन प्रणाली को कहा जाना चहिए, जहां इसका प्रयोग समस्त वर्गों के कल्याण और वर्गविहीन समाज की अवतारणा के लिए किया जाता है।

लोकतंत्र को मार्क्सवादी अवधारणा की प्रमुख विशेषताएं निम्न प्रकार हैं–

1) इसके अन्तर्गत एक ही राजनीतिक दल का अस्तित्व होता है जो विधिक एवं वास्तविक रूप से प्रभावी होता है। समस्त राजनीतिक गतिविधियों का चालक यही होता है।

2) श्रमिक (सर्वहारा) वर्ग की अधिनायकशाही पूंजीवादी लोकतंत्रों से उत्तम है।

3) लोकतंत्र शोषण का यंत्र है।

4) सैद्धान्तिक रूप में व्यक्तिगत एवं सामाजिक गतिविधि के समस्त पक्षों से सरकार राजनीतिक रूप से सम्बद्ध होती है।

5) पूंजीवदी लोकतंत्र का अन्त हो जाना ही श्रेयस्कर है।

6) जन–सम्पर्क के समस्त माध्यमों एवं न्यायपालिका के ऊपर सरकार द्वारा कठोर नियंत्रण का प्रयोग किया जाता है।

यहां यह चर्चा कर देना भी वांछनीय होगा कि मार्क्सवादी लोकतंत्र की पूर्व शर्तों के रूप में तीन संस्थागत व्यवस्थाओं को अपनाना अत्यावश्यक है। एक, उत्पादन एवं वितरण के साधनों पर सार्वजनिक स्वामित्व; दो, सम्पत्ति का समान वितरण और सभी व्यक्तियों को आर्थिक सुरक्षा; तथा तीन, साम्यवादी दल का समस्त सत्ता पर एकाधिकार।

अन्त में, यह कहने में जरा भी संकोच नहीं है कि मार्क्सवादी लोकतंत्र को अधिनायकवाद के अधिक निकट माना जा सकता है। इसके प्रतिपादक इसे 'बहुजन हिताय' बतला कर 'एक उच्च प्रकार का लोकतंत्र' मान सकते हैं किंतु सच यह है कि इसके द्वारा आर्थिक लोकतंत्र अस्तित्व में आ सकता है।

समाजवादी दृष्टिकोण–

लोकतंत्र का समाजवादी दृष्टिकोण उदारवादी एवं मार्क्सवादी अवधारणाओं के समन्वय का परिणाम है।यह राजनीतिक स्वतंत्रता एवं आर्थिक समानता को मूलभूत तत्व मान कर चलता है। यही कारण है कि इस दृष्टिकोण को उदारवाद एवं मार्क्सवाद का संगम कहना औचित्यपूर्ण नहीं कहा जा सकता। तृतीय विश्व के अधिकांश देशों को जहां राजीतिक स्वतंत्रता की सुविधा देनी पडी वहीं उन्हें आर्थिक असमानताओं को ज़यादा–से–ज्यादा घटाने का भागीरथ प्रयास भी करना पड़ा है। भारत ऐसे ही देशों की श्रंखला में एक महत्वपूर्ण कड़ी है। भारत की भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने एक बार कहा था कि ''स्वतंत्रता तभी वास्तविक बनती है जब यह उन बहुसंख्यक लोगों के लिए, जो अत्यधिक पीड़ित एवं उपेक्षित रहे हैं, कुछ राहत ला सके तथा सुविधाएं देश के गरीब व्यक्ति तक पहुंच सकें।

निष्कर्ष

निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि भारतीय लोकतंत्र एक प्रगतिशील एवं जीवंत लोकतंत्र के रूप में उभर कर सामने आया है। हमें न्यायिक क्षेत्र में भी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। न्याय मिलने में देरी और भी अन्याय है। आज गरीबों को न्याय मिलना चुनौतीपूर्ण है। अतः भारतीय लोकतंत्र को इस दिशा में पहल करना होगा कि न्याय केवल मिलना ही नहीं चाहिए, वरन् स्पष्टतया नज़र भी आनी चाहिए। एक महत्वपूर्ण बात यह है कि मीडिया को भी अपनी भूमिका पर पुनः विचार करना होगा कयोंकि बाज़ार मूलक प्रतिस्पर्धा की दौड़ में वह लगातार स्थूलता की संस्कृति को बढ़ावा दे रही है तथा गंभीर चर्या की संस्कृति को पीछे धकेल रही है। विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश होने के कारण तथा एक लोकतांत्रिक संस्कृति के कारण इसके समक्ष तमाम संभावनाएं हैं कि यह आने वाले समय में अपनी विसंगतियों को दूर करने में सफल होगा। इस संदर्भ में हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि आतंकवाद हो या नक्सलवाद, महिला उत्थान हो या दलितोत्थान, या फिर चाहे विकास की समस्याएं ही क्यों न हो; इन सभी का सर्वोत्तम एवं बेहतर विकल्प लोकतंत्र ही है।

References

Khan, Saeed (25 January 2010). "There's no national language in India: Gujarat High Court". The Times of India. Retrieved 5 May 2014.

Press Trust of India (25 January 2010). "Hindi, not a national language: Court". *The Hindu*. Ahmedabad. Retrieved 23 December 2014.

"India improves its ranking on corruption index". 27 January 2016. Retrieved 21 November 2017.

Barak, Aharon (2006), "Protecting the constitution and democracy", in Barak, Aharon, The judge in a democracy, Princeton, New Jersey: Princeton University Press, p. 27,

Kelsen, Hans (October 1955). "Foundations of democracy". Ethics, special issue: Part 2: Foundations of Democracy. Chicago Journals. 66 (1): 1–101.

Barrow, Ian J. (2003). "From Hindustan to India: Naming change in changing names". *South Asia: Journal of South Asian Studies*. **26** (1): 37–49.

Scharfe, Hartmut E. (2006), "Bharat", in Stanley Wolpert, *Encyclopedia of India*, 1 (A-D), Thomson Gale, pp. 143–144

Thapar, Romila (2002), The Penguin History of Early India: From the Origins to AD 1300, Allen Lane; Penguin Press, pp. 146–150

"Population Enumeration Data (Final Population)". Census of India. Retrieved 17 June2016.

"Human Development Report 2016 Summary" (PDF). The United Nations. Retrieved 21 March 2017.

"Preamble of the Constitution of India" (PDF). Ministry of Law & Justice. Retrieved 27 September 2017.

Sharma, Ram Sharan (1991), *Aspects of Political Ideas and Institutions in Ancient India*, Motilal Banarsidass Publ., pp. 119–132

"India ranks fourth in global slavery survey". Times of India. 1 June 2016. Retrieved 21 November 2017.